अध्याय – १

राग : परिभाषाओं का अध्ययन

राग को भारतीय संगीत की आत्मा माना गया है । राग का अर्थ एवं उसके उद्देश्य का ज्ञान हर एक संगीत के साधक के लिये अनिवार्य माना गया है । अधिकतर विद्वानो का मत है कि राग गायन के पूर्व जाति गायन का प्रचार प्रसार था । जाति गायन का संबंध लोक संगीत में उपयुक्त धुनो से है ऐसा श्री रातंजनकर जी का मत था । लोक संगीत की धुनो का अभ्यास करने पर यह पाया जाता है कि कुल मिलाकर १८ धुनो का प्रयोग दिखाई देता है । संगीत के प्राचीन ग्रंथों में जातियो की संख्या भी १८मानी गयी है । पूराने ग्रंथों को आधार मानकर यह सिद्ध होता है कि जाति गायन से राग का उगम हुआ है । धुन यह सिमित स्वरो से निर्माण होती है । धुन का क्षेत्र संक्षिप्त होता है । जब इसी धुन का विस्तार किया जाता है तब धुन को राग का स्वरूप प्राप्त होता है ।[1] इसी कारण राग गायन का मूल स्त्रोत लोक संगीत को माना जा सकता है । राग की संकल्पना ईसवी सन् छट्ठी शताब्दी में अस्तित्व में आई होगी ऐसा विद्वानों का मत है ।

१.१ जाति गायन के संदर्भ में पं. रातंजनकर जी के विचार :

जाति गायन के संदर्भ में पं. रातजनकर जी ने कुछ विचार व्यक्त किये है जो महत्व पूर्ण है– 'प्राचीनकाल में वैदिक मंत्र, भक्तिगीत, स्तोत्र, आरतियाँ, गाथाएँ अपनी खास तर्जो पर गायी जाती थी । किन्तू वैदिक मंत्र काव्य छंदों में उच्चारित किये जाते थे, न कि ताल के साथ जब इन गेय पद्यों के साहित्य में अर्थात् शब्द रचना से अलग तौर पर यानि स्वर तालो के ढाचे पर या तर्जो पर विचार होने लगा तब जाकर संगीत शास्त्र का सूत्रपात हुआ । इन्हीं तर्जो का ही विकास आगे चलकर जाति नामक स्वर रचनाओं में हुआ । जाति यानी गेय पद्यों की तर्ज अथवा गेय पद्यों की स्वर ताल रचना । जिन दिनों स्वरलीपि प्रणाली का अस्तित्व नहीं था या उसका विशेष प्रचार नहीं था, उस काल में नाटकों या काव्य संग्रहो की पुस्तको में गीतो के शिर्षक के उपर 'अमूक गीत की तर्ज पर' यों लिखां जाता था । कहना यह होगा कि यह गीत जनसाधारण

1. सांगोराम, श्रीरंग-संपादक/मुक्त संगीत-संवाद/पृ. १९९

में पूर्व परिचित होता था । सारांश यह है कि स्वर तालों का बंधा हुआ ढाँचा यानि जाति, अपने अपने जमाने में प्रसिद्ध और लोकप्रिय रहने वाले गीतों की तर्ज यानि जाति ।

नाट्यशास्त्र के रचयिता भरत के समय जाति गायन का प्रचार था । भरत ने नाट्य शास्त्र में राग का उल्लेख नहीं किया है । २८वे अध्याय में केवल एक उल्लेख प्राप्त हो ता है जो निम्न रूप से है –

'नाट्य शास्त्र २८वा आध्याय ७२वा श्लोक'

'यस्मिन्वसति रागः तु यस्माच्चैव प्रवर्तते ।'

इस श्लोक में राग शब्द का अर्थ प्रयोग जातियों के एक रंजक अंश के अर्थ में हुआ है या राग, शब्द के पारंपारिक अर्थ में यह स्पष्ट नहीं होता है । अधिकतर विद्वानों का मत है कि आज राग नामक जो संकल्पना स्वीकृत हुई है उसका वर्णन भरत के नाट्य शास्त्र में नहीं है । [1]

संगीत के ग्रंथ मतंगकृत बृहद्देशीय में राग की व्याख्या दी गई है । इससे स्पष्ट होता है कि इस ग्रंथ के समय तक जाति गायन पिछडी अवस्था में होगा और लोक संगीत को अलग रूप प्राप्तहोते हुए राग गायन का प्रचार हुआ होगा । जाति गायन के स्थान पर राग मूर्छना के आधार पर राग गायन का प्रचार किया गया होगा । जाति गायन के धीरे–धीरे लुप्त होने के साथ–साथ राग गायन का प्रचार हुआ यह स्पष्ट रूप से माना गया है । पं. रातंजनकर जी ने जाती गायन के लुप्त होने के पश्चात राग गायन का प्रचार प्रसार हुआ, इस मत को व्यक्त किया है, जिससे शौधार्थी सहमत है ।

संगीत की उत्पत्ति से राग गायन तक संगीत की उत्क्रांति में राग गायन के पूर्व जाति गायन एक महत्वपूर्ण कडी माना गया है । इसलिए आज प्रचलित राग गायन में जो नियम दिखाई देते है, इनमें से कई नियम जाती गायन के १० नियमों से प्रभावित है ।

शोधार्थी द्वारा जाति गायन का राग गायन पर प्रभाव स्पष्ट करने की दृष्टि से जाति गायन के नियमों का उल्लेख अपने शोध ग्रंथ में निम्नरूप से किया है ।

1. रातंजनकर, श्रीकृष्ण/संगीत परिभाषा विवेचन/पृ. ३८

१.२ जाति गायन के नियम :

गृह स्वर : प्रत्येक जाति का आरंभ किसी न किसी विवक्षित स्वर से करना पडता था । उस स्वर को गृह स्वर का नाम दिया गया ।

अंश स्वर : प्रत्येक जातिमें कुछ स्वर प्रबल रहते थे उन्हें अंश स्वर कहा जाता था ।

तार : तार सप्तक में जिस स्वर तक जाने का नियम रहता था उसे तार कहते थे ।

मंद्र : मंद्र सप्तक में जिस स्वर तक जाना संभव होता था उसे मंद्र कहते थे ।

न्यास स्वर : जिस प्रकार जाति का आरंभ किसी एक विवक्षित स्वर पर होता था उसी प्रकार जाति की समाप्ति भी एक खास स्वर पर होती थी ऐसे स्वर के लिए 'न्यास' स्वर नाम था ।

अपन्यास : अंतिम समाप्ति वाले न्यास के अलावा अन्य स्थानों पर, यानि बीच–बीच में गीत के चरणो में जो न्यास रहते थे, उन्हें 'अपन्यास' कहा जाता था ।

सन्यास स्वर : गीत के प्रथम चरण के अंत में रहनेवाला स्वर सन्यास स्वर कहलाता था ।

विन्यास : गीत के प्रत्येक चरण के अलग–अलग भाग बनने वाले यानि उस भाग के अंत में आने वाले जिस स्वर पर ठहराव होता था उसे विन्यास कहां जाता था ।

अल्पत्व : राग के स्वरो में से किसी स्वर को जानबुझकर दुर्बल किया जाए तो उसे उस स्वर का अल्पत्व माना जाता था । यह अल्पत्व या तो उस स्वर का 'लंघन' करके अर्थात् उसकी क्रम इस्तमाल करके यानि उसका अनाभ्यास करके अथवा उसकी पूनरावृत्ति टालकर फलित होता था ।

बहुत्व : अल्पत्व के विरोध में बहुत्व की क्रिया होती थी, किसी राग में प्रयुक्त स्वरो में से किसी एक स्वर को प्रबल करके याने उसका अलंघन करके अर्थात् उसे न दालते हुए सीधे आरोह में वह स्वर लगाया जाए अथवा उसका अभ्यास या पूनरावृत्ति की जाए याने लगातार या बिच में कुछ स्वर लगाकर उस खास स्वर को प्रयुक्त किया जाए तो उस कृतिको उस स्वर का

बहुत्व माना जाता था ।

जाति गायन में उपर्युक्त नियमों का पालन आवश्यक माना जाता था । इस आधार पर ऐसा अनुमान बन सकता है कि उस जमाने में एकल गायन वादन की अपेक्षा सामूहिक गायन–वादन का प्रचार अधिक रहा होगा । आगे चलकर जाति गायन–वादन के लुप्त हो जाने और राग–गायन प्रचलित हो जाने पर ये नियम रागो पर भी लागु किये जाने लगे ।[1] राग गायन के पूर्व जाति गायन का प्रचार–प्रसार था यह अधिकतर विद्वानो का मत है ।

१.३ बृहद्देशी ग्रंथ में प्राप्त राग की परिभाषा के संदर्भ में पं. रातंजनकर जी का मत :

राग की परिभाषा सबसे पहले मंतग मूनि ने अपने 'बृहद्देशी' ग्रंथ में की है, वह इस प्रकार है–

स्वरवर्णविशिष्टेन ध्वनिभेदेन वा जनः ।
रज्यते येन कथितः स रागः संमतः सताम् ।।

अथवा

योऽसौ ध्वनिविशिषेस्तु स्वरबर्णविभूषितः ।
रंजको जनचित्तानां स रागः कथितो बुधैः ।।

पं. रातंजनकर जी ने उपरोक्त परिभाषा के संदर्भ में अपने मत इस प्रकार व्यक्त किए है–

(१) इस परिभाषा का अर्थ –'स्वरो और वर्णो से युक्त ऐसा ध्वनि विशेष (विशिष्ट नाद रचना) जो रंजक या मन को बहलाने वाला होता है, उसे पंडित लोग राग कहते है ।

(२) इस परिभाषा में पहली पंक्ति में 'राग याने क्या?' यह बताया गया है और दुसरी पंक्ति में उसका 'स्वरूप कैसा होना चाहिए' इसे लक्षित किया गया है । यह परिभाषा आजतक स्वीकृत रूप में चली आ रही है, जो कि बहुत महत्वपूर्ण है ।

(३) पहली पंक्ति में स्वर और वर्ण शब्द आए है, वे बहुत महत्व के है । स्वर शब्द के द्वारा सुझाया जाता है कि राग स्वरों के माध्यम से ही अभिव्यक्त किया जाता है । श्रुतियों के द्वारा नहीं ।

---

1. रातंजनकर, श्रीकृष्ण/संगीत परिभाषा विवेचन/पृ. ३९, ४०

(४) राग की उपरोक्त परिभाषा में दुसरा महत्वपूर्ण शब्द वर्ण है। वर्ण की परिभाषा हमारे संगीत शास्त्र में इस प्रकार मिलती है–

गान क्रियोच्यते वर्णः स चतुर्धा निरोपितः ।

स्थाय्यारोह्यवरोही च संचारीत्यथ लक्षणम् ।।१।।

स्थित्वा स्थित्वा प्रयोगः स्यादेकस्यैव स्वरस्य यः ।

स्थायी वर्णः स विज्ञेयः परान्वर्धनामकौ ।।२।।

एतत्संमिश्रणाद्वर्णः संचारी परिकीर्तितः ।।३।।

अर्थ = गाने की प्रत्येक्ष क्रिया को वर्ण कहते है। वर्ण के ४ प्रकार के है। (१) स्थायी (२) आरोही (३) अवरोही (४) संचारी।

(१) स्थायी वर्ण = एक ही स्वर का रह–रहकर बार–बार उच्चारण करना यथा सासासा पपप

(२) आरोही वर्ण = निचे के स्वर से उच्च स्वर पर जाना जैसे –सा ग सा म रे ग म प ध नि सां इत्यादि।

(३) अवरोही वर्ण = उच्च स्वर से निचे के स्वर पर आना। यथा – ध प सां ध सां नि ध नि सां इत्यादि।

(४) संचारी वर्ण = उपर्युक्त तिनों का समावेश जिनमें हो यथा – सासारे, गग, मपमगरे, गममप, धपमग, रेसा इत्यादि।

(५) राग की परिभाषा की दुसरी पंक्ति में कहां गया है कि राग रंजक होना चाहिए। रंजकता दो प्रकार की होती है – (१) स्वयं स्वर रचना रंजक हो और (२) उसके रंजक होने के साथ साथ वह रंजक रिति से गायी बजायी जाए। [1]

शोधार्थी का मत है कि बृहदेशी ग्रंथ से प्राप्त राग की परिभाषा अत्यंत महत्वपूर्ण है और वर्तमान समय में भी संगीत साधकों का मार्गदर्शन करने में समर्थ है। इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि राग रचना में स्वर, स्वरों का चलन, स्वरों द्वारा अभिव्यक्ति और रंजकता इन सभी घटकों

1. रातंजनकर, श्रीकृष्ण/संगीत परिभाषा विवेचन/पृ. ५९, ६०, ६१

का होना आवश्यक है । पं. रातंजनकर जी ने विस्तृत रूप से राग की परिभाषा का विश्लेषण किया है । इस से परिभाषा का अर्थ शुस्पष्ट हुआ है, ऐसा शोधार्थी का मानना है ।

१.४ राग के संदर्भ में पं. के.जी. गिंडे जी का मत :

पं. के.जी.गिंडेजी ने राग के संबंध में अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है–

(१) 'राग शब्द संस्कृत के मूल शब्द 'रंज' से लिया गया है, जिसका अर्थ मन को प्रफुल्लित करना है । अंतर को ग्राह्य होना है । वस्तुतः जो मन को प्रसन्न करता है, जो मस्तिष्क को शांति पहुँचाता है वही राग है । 'रंजयति इति रागः'

(२) 'यह कहना कठिन है कि राग कब अस्तित्व में आया । फिर भी राग शब्द का उसके तकनिकी अर्थ में प्रथम प्रयोग कवि गुरु कालिदास द्वारा अपने नाटक 'अभिज्ञान शाकूंतलम' के प्रथम दृष्य के आमुख में किया गया, जब कि नटि को सारंग राग में एक गीत गाना होता है । कालिदास का काल ईसा के बाद चौथी शताब्दी माना जाता है । भारतीय संगीत पर प्रथम मान्य लेखक भरत मुनि ने राग का जिक्र नहीं किया । उनके काल में ग्राम–मूर्छना–जाति का अनुसरण किया जाता था । फिर भी राग की प्रथम व्याख्या मंतग मूनि ने 'बृहदेशी' में की जो ईसा के बाद छट्ठी शताब्दी में लिखा गया । अतः निःसंदेह कह सकते है कि चौथी और पांचमी शताब्दी में राग प्रचार में आया, और उन्होंने धीरे–धीरे ग्राम–मूर्छना–ताति का स्थान लेना शुरु कर दिया ।

(३) शारंगदेव जो संगीत के प्रसिद्ध ग्रंथ 'संगीत रत्नाकार' के रचयिता है उन्के काल के बाद उत्तर में राग–रागिनिया और दक्षिण में जनक–मेल एवं जन्य राग 'संगीत शास्त्र' का आधार बन गया । [1]

(४) बृहदेशी ग्रंथ में प्राप्त राग की परिभाषा का अर्थ यह है कि– राग वह है जो स्वर और वर्ण की ध्वनिगत श्रेष्ठता के कारण सुंदर है और श्रोता को आनंद की अनुभूति करता है । सामान्य रूप से हम कह सकते है कि क्रमिक सांगितिक ध्वनियाँ जो कर्ण प्रिय है और संगीत की

---

1. गर्ग, लक्ष्मीनारायण/निबंध संगीत/पृ. ३६४, ३६५, ३६६

आकांक्षा की पूर्ति करती है, राग के रूपों में जानी जाती है । दुसरे शब्दों में संगीत की कुछ स्वर संगतियों को जो कर्ण प्रिय है, जिसे 'राग' कहां जाता है । [1]

(५) 'हमारे रागो का अपना विशिष्ट व्यक्तित्व है, अतः प्रत्येक राग कलात्मक सृजन की स्मरणीय वस्तू है । प्रत्येक राग विशिष्ट भावना व्यक्त करता है ।'

'छात्रो के लिए प्रत्येक राग का उसकी ध्वनिगत विशिष्टता और बल के साथ गम्भीर अध्ययन आवश्यक है, ताकि उसके व्यक्तित्व को भली भांति समझा जा सके ।

रागो के उपरी ज्ञान से उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती । इसके बाद प्रत्येक की साधना इस ढंग से करनी होगी कि उसका स्वतंत्र रूप स्थापित हो सके, चाहे वह बंदिश हो या मुक्त विस्तार ।

राग के साथ एक हो जाने पर ही संगीतज्ञ उसका सही प्रभाव स्थापित कर सकता है । इसलिए मेरा कहना है कि राग का सही स्वरूप तभी बताया जा सकता है जब कि उसके पूर्णरूप की विस्तृत कल्पना की जाए और उसका अध्ययन किया जाए । [2]

पं. के.जी. गिंडे जी ने राग शब्द की उत्पत्ति, राग शब्द का प्रयोग, राग की परिभाषा का विश्लेषण, राग का अभ्यास, राग एवं कलाकार का संबंध इन सभी विषयों पर महत्वपूर्ण मार्गदर्शन किया है । 'राग–तत्व' को समझने में यह सहायक है, ऐसा शोधार्थी का मत है ।

१.५ राग की विभिन्न परिभाषाएँ :

'राग' शब्द के अनेक अर्थ हमे विभिन्न शब्द–कोशों से प्राप्त है जैसे वर्ण, रंग, रंजकत्व, लालिमा, प्रेम,स्नेह, प्रणयोन्माद, भावना, संकेत, सहानुभूति, संवेदना, हर्ष, आनंद, प्रिय, सौन्दर्य, शास्त्रीय संगीत के राग, संगीत माधुर्य, लालच, इर्ष्या आदि । [3] परंतु रंजक तत्त्व से संबंध रखनेवाले अर्थ ही संगीत के संदर्भ में महत्वपूर्ण माने जा सकते है । शास्त्रीय संगीत के कई विद्वानों, अभ्यासकों एवं साधको ने राग के विषय पर अपने मत ग्रंथों, किताबों और व्याख्यानों द्वारा व्यक्त किएँ है, इनके अध्ययन से 'राग' की परिभाषा और स्वरूप अधिक स्पष्ट

1. गर्ग, लक्ष्मीनारायण/निबंध संगीत/पृ. ३६५
2. गर्ग, लक्ष्मीनारायण/निबंध संगीत/पृ. ३६५
3. आपटे, वामन शिवराम/संस्कृत-हिन्दी कोष/पृ. ८५

होते है ऐसा शोधार्थी का मानना है । 'राग' की कुछ परिभाषा और विद्वानानों के मत निम्न लिखित है –

(१) संगीत शास्त्र में 'राग' का दो अर्थो में प्रयोग हुआ है – एक सामान्य और दूसरा विशेष सामान्य अर्थ में 'राग' रंजकता का वाचक है और विशेष अर्थ में वह एक ऐसे नादमय व्यक्तित्व का द्योतक है जो स्वर देह और भाव देह से समन्वित है ।[1]

(2) H. A. Popley : Ragas are different series of notes within the octave, which form the basis of all Indian melodies and are differentiated form each other by prominence of certain fixed notes and by the sequence of particular notes. We may perhaps find in the term 'melody - type' the best way to transcribe raga in English.[2]

(3) S. Bandopadhyay : A Raga is the combination of different notes that are contained in an octave, with 'Vernas' that pleases the listeners.[3]

(4) Alain Danielou : The notes which are to convey certain definite emotions or ideas must be carefully selected from the 22 intervals of shruti scale and then grouped to form a mode, a raga. Any artificially formed scale is not necessarily a raga, for its meaning may be confused and without appeal. The essential feature of the raga is its power of evoking an emotion that takes hold of the hearers like a spell.[4]

(5) Peggy Holroyde : की किताब में पंडित रवि शंकर राग के विषय में अपना मत कुछ इस प्रकार व्यक्त करते है –

"I think that most accurate definition (of raga) is that it is a scientific subtle, precise and aesthetic melodic form with its ascending and descending movement which consist of either a full octave or a series of six or seven notes."

"A raga expresses more than just musical statements, it is the means where by Indian musicans conjure up the inner world that moves their beings."[5]

(6) Swami Prajananda : It has been stated before that the musicology states that the ragas are born of combination and permutations of notes or tones and as

1. गर्ग, लक्ष्मीनारायण/निबंध संगीत/पृ. २६९
2. पोपले, एच.ए./दि म्युझिक ऑफ इंडिया/पृ. ३९
3. बंडोपाध्याय, एस./दि ओरिजिन ऑफ रागा/पृ. ७९
4. डेनिएलू, एलेन/नार्थ इंडियन म्युझिक/पृ. ११५
5. हॉलरॉईड, पेगी/दि म्युझिक ऑफ इंडिया/पृ. ६५

they produce sweet and soft impressions (संस्कार) in the mind of men and animals, they are termed as ragas. Ragas are of the aesthetic or sentimental character.

In music ragas are the prime things or lives (प्राण) and as they are constructed out of different tones or notes, they create some sentiments and moods. The ragas of music are living and inspiring because of their specific sentiments, and those sentiments saturate the minds of men animals and consequently minds are attracted towards ragas or melodies and this is the psychological interpretation of the ragas or sweet and soothing musical sounds. [1]

(7) B. Chaitanya Deva : "A Raga is basically incipient melodic idea. It has to be elaborated in bringing out its aesthetic potentialities, which procedure is often called improvisation. This necessitates various formal constructions rhythmically bound or free. However, these form themselves get slightly different colorings due to musical dialects, which in India are known as 'Gharanas' or 'Banis'. Finally, of course, there is the style and the individuality of the musician himself." [2]

(8) Raghavan R. Menon : "A Raga is some what like a rich and ornately carved door beautiful in itself but whose true value finally lies in its ability to open and let you glimpse another vista."

"The Raga is thus a means where by the singer may be able to give a sense of something living, magical and eternal in him to the audience. Taken in loose sense the prescriptions of time and seasons for each Raga are only an aid, a prospitious environment and atmosphere to help him give a sense of himself." [3]

(9) Dr. Prabha Aatre : The concept of raaga makes it possible to explore the highest aspects of Melody While Taal helps to explore rthythmic structures. These concepts have influenced the creation, progress and experience of Indian Music.

It is difficult to define raga in words. It is an abstract concept. One has to understand it by constant and conscious listening to its actual performances. its meaning and identity grow slowly within oneself. Broadly speaking raga is a system

1. प्रजानंदा, स्वामी/म्युझिक ऑफ नेशन(ए कम्पॅरिटिव्ह स्टडी)/पृ. ५३, ५४
2. देवा, चैतन्य बी./इंडियन म्युझिक/पृ. ६
3. मेनन, राघवन आर./दि साउन्ड ऑफ इंडियन म्युझिक/पृ. २०

of developing a melodic scheme based upon a scale in which each note is treated in a characteristic way in terms of duration, combination and ascending - descending movements. [1]

(10) Dr. Anjali Sharma : A Raga is a specific form which serves to permit and determine as a matrix, the creation and contemplation of music on the basis of the quality, emphasis and relateness of tones and rhythmic abidance or passage, with an eye to evoking the appropriate 'raga', and inevitably in accordance with one's individual capacities for technical grasp and aesthetic sensitiveness. [2]

(11) Ashwini Bhide : "As a performing Artist, finding a purpose for raga is as important to me as describing or defining it. What do I use my raaga for ? The raga is my vehicle for 'my expression'.

when I am 'building' a raga, my raga needs to be structurally sound and strong, aesthetically, proportionate and graceful, functionally viable and meaningful.

Even afer achieving all this, sometimes the raga structure fails to satisfy the soul of listener. When I introspect why this happens, I find that even though all the structured elements are present in their place and aesthetic proportions, the idol of the raga - deity has not yet been established at the center of the structure. This establishment has to be intensely personal, or else the artist fails to touch the raga, Is this centerpiece the 'raga - tattva' difficult to say. [3]

(12) Pt. Ajoy Ckakraborty : Notes in a raga are connected to each other. This connection needs movements. Movements makes these ragas living. Ragas are living entities. [4]

---

1. अत्रे, प्रभा/इनलाईटनिंग दि लिसनर–कंटेम्पररी नार्थ इंडियन क्लासिकल वोकल म्युझिक परफोरमन्स/पृ. ७
2. शर्मा, अंजली/हिन्दुस्तानी म्युझिक एन्ड दि एस्थेटिक कंसेप्ट ऑफ फॉर्म/पृ. ८९
3. राजा, दिपक एस./दि रागानेस ऑफ रागाज़ रागाज़ बियोन्ड दि ग्रामर/पृ. १३,१४
4. चक्रवर्ती, अजोय/लेक्चर डेमोन्सट्रेशन/ए. रागा एन्ड इट्स यूनिकनेस

निष्कर्ष :

राग की परिभाषाओं और विद्वानो के विभिन्न मतो के अध्ययन से ‘राग’ के विभिन्न पहलू उजागर होते है । शोधार्थि के अध्ययन द्वारा कुछ निष्कर्ष प्राप्त हुए, जो इस प्रकार है–

(१) राग गायन के प्रचार के पूर्व जाति गायन का प्रचार था ।

(२) राग का उल्लेख आचार्य भरत के नाट्यशास्त्र में प्राप्त नहीं होता है ।

(३) राग की सर्व प्रथम व्याख्या मतंग मुनिकृत बृह्ददेशी ग्रंथ में प्राप्त होती है ।

(४) राग की रचना में स्वर एवं वर्ण महत्वपूर्ण घटक है ।

(५) राग की रचना में स्वर संगतियों का विशेष स्थान है ।

(६) राग में स्वरो के अलग अलग मिश्रित स्वरूप (Combinations) दिखाई देते है ।

(७) राग रचना में स्वर लगाव अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

(८) राग का रंजक होना एवं उसके द्वारा श्रोताओं को आनंद की अनुभूति होता आवश्यक है ।

(९) राग में विशिष्ट भाव (Emotions) जागृत करने की क्षमता है ।

(१०) कई विद्वानो का मत है कि हर एक राग का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व एवं जीवित अस्तित्व है ।

(११) राग को किसी देवता स्वरूप मानकर राग गायन को उस देवता की प्राण प्रतिष्ठा भी माना गया है ।

(१२) राग के स्वरों का एक दूसरे से संबंध महत्वपूर्ण है और इस संबंध के कारण गति का अनुभव राग द्वारा होता है ।

(१३) राग की व्याख्या करना कठिन है ।

(१४) राग का मूल उद्देश्य आत्मरंजन है ।

(१५) राग के प्रति समर्पण भाव और शरणागति कलाकर के लिए आवश्यक है ।